https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 05, PP 119-129 (Total PP 11)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

Cultural Tradition and Social Consciousness of Rajasthani Folk Music

Vikram [a]*, **Dr. Swati Sharma** [b]

[a] *Research Scholar, Department of Music Jai Narain Vyas University, Jodhpur*
[b] *Research Supervisor & Assistant Professor, Department of Music Jai Narain Vyas University, Jodhpur*
[a]*Email: ranavikram454@gmail.com*

Abstract

Rajasthani folk music is an integral part of India's rich cultural tradition, which is not only a means of entertainment but also a living document of public life's experiences, social concerns, and historical heritage. This musical tradition gives voice to various castes, communities, festivals, life rituals, and social events. Singing styles of Maand, Pabuji ki Phad, Gavari, Terah Taali, Langas and Manganiyars, along with instruments like Dholak, Kamaicha, Ravanhatha, create a cultural heritage that touches the soul. While feelings of love, devotion, and valor emerge in Rajasthani folk songs, on the other hand, they also express social inequalities, the pain of women's lives, exploitation, and the experiences of struggle. Analyzing the diverse styles of folk music in depth in this article clarifies that it is not just a tradition of the past, but also a powerful medium of current social consciousness and cultural resurgence. Amidst the increasing influence of modernity and marketism, folk music is emerging as a basis for social dialogue and cultural stability, which needs to be preserved and promoted.

राजस्थानी लोक संगीत भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा का अभिन्न अंग है, जो ना केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि जनजीवन की अनुभूतियों, सामाजिक सरोकारों और ऐतिहासिक विरासत का जीवंत दस्तावेज भी है। यह संगीत परंपरा विभिन्न जातियों, समुदायों, त्योहारों, जीवन संस्कारों और सामाजिक घटनाओं को स्वर देती है। माँड, पाबूजी की फड़, गवरी, टेराटाली, लांगाओं और मंगणियारों की गायन शैलियाँ, ढोलक, कमायचा, रावणहत्था जैसे वाद्ययंत्रों के साथ मिलकर एक ऐसी सांस्कृतिक विरासत का निर्माण करती हैं जो आत्मा को स्पर्श करती है। राजस्थानी लोक गीतों में जहां एक ओर प्रेम, भक्ति और वीरता की भावनाएँ उभरती हैं, वहीं दूसरी ओर वे सामाजिक विषमताओं, स्त्री-जीवन की पीड़ा, शोषण और संघर्ष की अनुभूतियों को भी व्यक्त करते हैं। इस लेख में लोक संगीत की विविध शैलियों का गहराई से विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि यह केवल अतीत की परंपरा नहीं, बल्कि वर्तमान सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक पुनरुत्थान का सशक्त माध्यम भी है। आधुनिकता और बाजारवाद के बढ़ते प्रभाव के बीच लोक संगीत सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक स्थायित्व का आधार बनकर उभर रहा है, जिसे संरक्षित और संवर्धित करने की आवश्यकता है।

Keywords: Rajasthani folk music, cultural tradition, social consciousness, folk heritage, female voice, public dialogue, folk instruments, Phad tradition, modernity and folk culture, music and social change.

राजस्थानी लोक संगीत, सांस्कृतिक परंपरा, सामाजिक चेतना, लोक विरासत, स्त्री स्वर, जनसंवाद, लोक वाद्ययंत्र, फड़ परंपरा, आधुनिकता और लोक संस्कृति, संगीत और सामाजिक परिवर्तन.

Received: 8/4/2025
Published: 8/31/2025

---

* Corresponding author.

भारत की सांस्कृतिक विविधता उसकी बहुरंगी लोक परंपराओं में परिलक्षित होती है, जिनमें लोक संगीत एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। लोक संगीत न केवल मनोरंजन का एक स्रोत है, बल्कि यह समाज के सामूहिक अनुभव, ऐतिहासिक स्मृति, जीवन मूल्यों और संघर्षों का दस्तावेज भी होता है। यह परंपरा विशेष रूप से राजस्थान जैसे क्षेत्र में अत्यंत सशक्त रूप में विद्यमान है, जहाँ लोक संगीत जनजीवन में गहराई से समाहित है। राजस्थान के मरुस्थलीय भूगोल, जलवायु, सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक विविधता ने एक ऐसी लोक संगीत परंपरा का निर्माण किया है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परंपरा के माध्यम से आगे बढ़ती रही है (शर्मा, 2018)।

राजस्थानी लोक संगीत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अत्यंत समृद्ध और बहुआयामी रही है। यहाँ के लोक गीतों में ऐतिहासिक वीरता, धार्मिक आस्था, प्रेम और विरह की भावनाओं से लेकर सामाजिक विषमताओं और विद्रोह तक की अभिव्यक्ति मिलती है। उदाहरणस्वरूप पाबूजी की फड़, गोगाजी की कथा, राणा प्रताप और जैमल मेड़ता की गाथाएँ लोक समाज में वीर-रस और गौरवबोध का संचार करती हैं (जैन, 2016)। वहीं दूसरी ओर मीरा के भजन भक्ति और अध्यात्म के स्वर को जनमानस तक पहुँचाते हैं। यह संगीतमय परंपरा केवल राजा-महाराजाओं या उच्च वर्गों की गाथाएँ नहीं गाती, बल्कि इसमें आमजन के संघर्ष, पीड़ा, प्रेम और श्रम की भी सम्मिलित अभिव्यक्ति होती है। राजस्थान की विविध लोक शैलियाँ—जैसे माँड, गवरी, तेरह ताली, ढूंढाड़ी गीत, बन्ना-बन्नी, गींदड़ आदि—विभिन्न क्षेत्रीय, जातीय और सामाजिक पृष्ठभूमियों को प्रतिबिंबित करती हैं। लंगा, मंगणियार, कालबेलिया, गंधर्व, नट और बंजारा जैसे समुदायों ने इस सांगीतिक धरोहर को ना केवल संजोया, बल्कि इसे आत्मा के संगीत में ढालकर सजीव रखा (चौधरी, 2020)। इनकी गायन शैली, राग-विन्यास, वाद्य प्रयोग और जीवन-शैली से स्पष्ट होता है कि राजस्थानी लोक संगीत केवल गायन की परंपरा नहीं है, बल्कि यह एक पूर्ण जीवन-दर्शन है, जो सामाजिक सामंजस्य, श्रद्धा, उत्सव और संघर्षों की गूंज है।

आज के वैश्वीकरण और तकनीकी संचार के युग में जहाँ एक ओर सांस्कृतिक समरूपता का दबाव बढ़ा है, वहीं दूसरी ओर लोक कलाओं के संरक्षण की चुनौती भी सामने आई है। आधुनिक संचार माध्यमों ने एक ओर लोक संगीत को नए मंच प्रदान किए हैं, तो दूसरी ओर उसके पारंपरिक स्वरूप को खतरे में भी डाला है। ऐसी स्थिति में इस अध्ययन की प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ जाती है कि हम यह समझें कि राजस्थानी लोक संगीत केवल अतीत की परंपरा नहीं, बल्कि वर्तमान सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक अस्मिता का भी सशक्त माध्यम है (मीणा, 2019)।

1.1 राजस्थानी लोक संगीत की विविध परंपराएँ

राजस्थानी लोक संगीत की परंपरा अत्यंत विविधतापूर्ण, बहुपरतीय और जीवंत है, जिसमें जनजातीय रचनात्मकता, धार्मिक आस्था, वीरता, विरह और भक्ति के स्वर एक साथ गूंजते हैं। यह विविधता न केवल गीतों के विषयवस्तु में परिलक्षित होती है, बल्कि संगीत की शैलियों, गायन-प्रदर्शन की पद्धतियों और वाद्ययंत्रों की बनावट तक में दृष्टिगोचर होती है (चौधरी, 2020)। राजस्थानी लोक संगीत की परंपराएँ क्षेत्र विशेष, सामाजिक वर्ग, जातीय पहचान और जीवन-प्रसंगों के आधार पर अलग-अलग रूपों में विकसित हुई हैं।

1.1.1 माँड: राजस्थानी संगीत में *माँड* शैली को सबसे उत्कृष्ट और कलात्मक गायन परंपराओं में माना जाता है। इसकी तानें श्रृंगार रस और सौंदर्यबोध से परिपूर्ण होती हैं। माँड शैली में "*केसरिया बालम*", "*घूमर*", और "*निंदिया के मारे*" जैसे गीत अत्यंत प्रसिद्ध हैं। यह शैली प्राचीन दरबारी और लोक संगीत के समन्वय से विकसित हुई मानी जाती है, जिसमें शास्त्रीय रागों की झलक भी मिलती है (शर्मा, 2018)। माँड का गायन

मुख्यतः मेल और स्त्री स्वर दोनों में मिलता है, और यह अक्सर सामाजिक अवसरों, राजस्थानी उत्सवों, और सांस्कृतिक आयोजनों में गाया जाता है।

1.1.2 पाबूजी की फड़: *फड़ गायन* राजस्थान की एक अनूठी और प्रदर्शनकला आधारित परंपरा है, जो *पाबूजी, देव नारायण, गोगाजी* जैसे लोकदेवताओं की कथाओं पर आधारित होती है। इसमें चित्रित कपड़े (फड़) के सामने भोपाओं द्वारा संपूर्ण रात भर गायन और अभिनय किया जाता है। पाबूजी की कथा ऊँटों के रक्षक, वीरता, और बलिदान की लोकगाथा है, जिसे समाज देवत्व और प्रेरणा के रूप में देखता है (जैन, 2016)। फड़ गायन में संगीत, चित्रकला, वाचन और आध्यात्मिक रस का सुंदर सम्मिलन होता है।

1.1.3 गवरी और जोगी गीत: *गवरी* आदिवासी (मुख्यतः भील समुदाय) की नाट्य-संगीत परंपरा है, जो सावन-भादो में शिव और पार्वती की कथाओं पर आधारित होती है। इसमें लोक नाट्य, नृत्य और गीत एक साथ होते हैं, और यह धार्मिक विश्वास के साथ-साथ सामुदायिक एकता और पर्यावरणीय चेतना को भी अभिव्यक्त करता है (मेहता, 2017)। वहीं *जोगी गीत* साधु-संतों, योगियों और सूफी भावधारा से प्रेरित लोकगीत हैं, जिनमें आध्यात्मिक संदेश, जीवन-मूल्य, और भौतिक मोह से विरक्ति की भावना प्रबल होती है। ये गीत सामाजिक स्तर पर संतुलन और समरसता का संदेश देते हैं।

1.1.4 मीरा और रामदेव के भजन- राजस्थान की भक्ति परंपरा लोक संगीत के माध्यम से अत्यंत प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुई है। *मीरा बाई* के भजन–जैसे "पायो जी मैंने राम रतन धन पायो", "माने चाकर राखो जी"—ना केवल स्त्री आत्माभिव्यक्ति का माध्यम बने, बल्कि सामाजिक रूढ़ियों के विरोध का भी प्रतीक बन गए (वर्मा, 2021)। मीरा के गीतों में भक्ति, विद्रोह, प्रेम और सामाजिक चेतना का अद्भुत संयोग मिलता है। इसी प्रकार *रामदेव पीर* के भजन विशेष रूप से दलित और वंचित समाज में आस्था के रूप में गाए जाते हैं। उनका संगीत समरसता, समानता और लोक-धर्म की भावना को स्थापित करता है। रामदेव भजनों में सूफियाना प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जिससे यह भक्ति संगीत हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रतीक बनता है (सोलंकी, 2019)।

1.1.5 वीर-रस और ऐतिहासिक गीत: राजस्थान के वीर गाथा गीत लोक स्मृति के ऐसे स्वरूप हैं जो इतिहास को जनमानस में जीवित रखते हैं। *जैमल मेड़ता* और *पता* जैसे योद्धाओं की गाथाएँ, *राणा प्रताप* के संघर्ष की लोकवाणी में अभिव्यक्ति, सामूहिक गर्व, बलिदान और स्वराज की चेतना को जगाते हैं। इन गीतों में तलवार, युद्ध, त्याग और मातृभूमि के लिए मर मिटने की भावना प्रबल होती है। लोकगायकों द्वारा गाए जाने वाले ये गीत सामाजिक वीरता का जीवंत रूप माने जाते हैं (सिंह, 2015)। इन विविध परंपराओं से स्पष्ट होता है कि राजस्थानी लोक संगीत केवल एक कला नहीं, बल्कि एक जीवंत संस्कृति है–जिसमें इतिहास, भक्ति, वीरता, सामाजिक आलोचना और सामूहिक चेतना का अद्भुत संगम है। प्रत्येक गीत शैली किसी न किसी सामाजिक-आध्यात्मिक या सांस्कृतिक उद्देश्य की पूर्ति करती है, और यही इसकी स्थायित्वशीलता तथा प्रासंगिकता का आधार है।

1.2 प्रमुख लोक वाद्ययंत्र और उनकी सांस्कृतिक भूमिका

राजस्थानी लोक संगीत की आत्मा उसके वाद्ययंत्रों में समाहित है। जहाँ एक ओर गीत लोकजीवन के अनुभवों, भावनाओं और विचारों की सशब्द अभिव्यक्ति करते हैं, वहीं वाद्ययंत्र इन गीतों को ध्वन्यात्मक जीवन प्रदान करते हैं। ये वाद्य न केवल ध्वनि उत्पन्न करने के उपकरण हैं, बल्कि वे एक संपूर्ण सांस्कृतिक प्रतीक भी

हैं–अपने स्वरूप, उत्पत्ति, उपयोग, और सामाजिक जुड़ाव के कारण। राजस्थान के लोक वाद्ययंत्र स्थानीय कारीगरी, सांस्कृतिक स्मृति और समाज की पहचान से गहराई से जुड़े होते हैं (सिंह, 2015)।

1.2.1 कमायचा: *कमायचा* राजस्थान का एक प्रमुख तंतुवाद्य (string instrument) है, जिसका प्रयोग विशेषतः *मंगणियार* समुदाय द्वारा किया जाता है। यह ऊँट की खाल, लकड़ी और तारों से निर्मित होता है। इसकी गूँज एक गहरी, करुण ध्वनि उत्पन्न करती है जो लोकगीतों के भाव को प्रभावी रूप से संप्रेषित करती है। कमायचा केवल एक वाद्य नहीं है, यह एक सांस्कृतिक पहचान है जो उस समुदाय की संगीत परंपरा, इतिहास और अस्तित्व से जुड़ी हुई है (चौधरी, 2020)। यह वाद्य पारंपरिक रूप से मौखिक इतिहास को संगीतमय रूप में संरक्षित करने का माध्यम रहा है।

1.2.2 रावणहत्था: *रावणहत्था* एक प्राचीन तंतुवाद्य है, जो *रावण* से जुड़ी लोककथाओं के कारण विशिष्ट सम्मान प्राप्त करता है। मान्यता है कि इसे सबसे पहले रावण ने स्वयं शिव की आराधना हेतु बनाया था। यह वाद्य वर्तमान में मुख्यतः *भील, संत* और *नट* समुदायों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है। रावणहत्था की ध्वनि उदासी, अध्यात्म और वीरता की मिलीजुली अनुभूति कराती है। इसे चलते-फिरते कथावाचक, भिक्षु और लोकगायक अपने कंधे पर लटकाए ले जाते हैं, जिससे यह वाद्य राजस्थान की यात्रा-कथा परंपरा का भी अभिन्न हिस्सा बन गया है (जैन, 2016)।

1.2.3 मुरली और एकतारा: *मुरली* एक सरल लेकिन अत्यंत प्रभावशाली बांसुरी है, जिसे विशेष रूप से चरवाहे, साधु-संत, और ग्रामीण कलाकार उपयोग में लाते हैं। इसकी मिठासभरी ध्वनि प्रेम, विरह और प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करने का माध्यम है। *एकतारा,* जैसा कि नाम से स्पष्ट है, एक तार वाला वाद्य है, जो संतों और भिक्षुओं द्वारा गाए जाने वाले जोगी गीतों का मुख्य वाद्य है। यह साधना, भक्ति और साधारण जीवन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है। इन दोनों वाद्ययंत्रों में सादगी के साथ-साथ भाव-प्रवेश की अपार क्षमता होती है, जिससे श्रोता आत्मविभोर हो उठता है (वर्मा, 2021)।

1.2.4 डफली: *डफली* या *डफ* राजस्थान के लोकगीतों में लय और ताल की रीढ़ मानी जाती है। विशेषतः विवाह, तीज, होली, और धार्मिक आयोजनों में स्त्रियाँ इसे बजाकर समूहगान करती हैं। डफली का प्रयोग सामाजिक सहभागिता, उत्सव और उत्साह को सशक्त करने के लिए किया जाता है। यह स्त्री-सशक्तिकरण के एक लोक माध्यम के रूप में भी देखा जा सकता है, जहाँ महिलाएँ एकत्र होकर डफली की थाप पर अपने जीवन के अनुभवों, संघर्षों और आशाओं को गीतों में पिरोती हैं (सोलंकी, 2019)।

1.2.5 वाद्ययंत्रों का सांस्कृतिक प्रतीकवाद: राजस्थानी लोक वाद्य केवल ध्वनि उत्पादक उपकरण नहीं हैं, बल्कि वे अपने आप में सांस्कृतिक प्रतीक हैं। इन वाद्यों का निर्माण स्थानीय संसाधनों से होता है, जैसे ऊँट की खाल, नीम की लकड़ी, बकरी की अंतड़ियाँ, तांबे के घुंघरू आदि। इन वाद्ययंत्रों की बनावट में स्थानीय ज्ञान, पारंपरिक शिल्पकला और प्रकृति से तादात्म्य की भावना समाहित होती है। उदाहरणतः रावणहत्था का आकार, उसके सिर पर रावण की आकृति, तथा कमायचा की गोलाकार पेटी उस समाज की धार्मिक कल्पनाओं, लोककथाओं और पहचान को दर्शाती है (शर्मा, 2018)।

1.2.6 गीत और वाद्य का समन्वय: राजस्थानी लोक संगीत की विशेषता गीत और वाद्य के बीच एक पूर्ण सामंजस्य में निहित है। लोकगायक जब वीर गाथाएँ गाते हैं, तो कमायचा और ढोलक की गूँज उस भाव को सजीव कर देती है। जब जोगी गीत गाए जाते हैं, तो एकतारा की स्वर लहरियाँ उस साधना को गूढ़ता प्रदान करती हैं। विवाह गीतों में डफली की थाप तालबद्ध उल्लास और सामूहिकता को प्रकट करती है। इस प्रकार,

वाद्य केवल सहायक तत्व नहीं, बल्कि गीत की आत्मा बन जाते हैं, और साथ मिलकर एक समन्वित लोक अभिव्यक्ति का निर्माण करते हैं (मीणा, 2019)। इस प्रकार देखा जाए तो राजस्थानी लोक वाद्ययंत्र न केवल संगीत का माध्यम हैं, बल्कि वे उस समाज की चेतना, परंपरा, इतिहास और सांस्कृतिक आत्मा के संवाहक भी हैं। इनका संरक्षण और दस्तावेजीकरण सांस्कृतिक स्थायित्व के लिए अत्यंत आवश्यक है।

1.3 जातीय और समुदाय-आधारित संगीत परंपराएँ

राजस्थानी लोक संगीत की आत्मा वहाँ के विशिष्ट जातीय समुदायों की जीवन-शैली, परंपरा और सांस्कृतिक दृष्टिकोण में रची-बसी है। इन समुदायों द्वारा विकसित की गई संगीत परंपराएँ न केवल कला का रूप हैं, बल्कि सामाजिक अस्तित्व, सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक आत्मबल का माध्यम भी हैं। विशेष रूप से लंगा, मंगणियार, कालबेलिया, गंधर्व जैसे समुदायों ने राजस्थान की लोक संगीत परंपरा को जीवंत बनाए रखा है, जो सदियों से मौखिक परंपरा के रूप में चली आ रही है (चौधरी, 2020)। ये समुदाय न तो केवल कलाकार हैं, और न ही केवल पारंपरिक वादक; ये अपने-अपने समाज के ऐतिहासिक गायक, कहानीकार, और सांस्कृतिक वाहक भी हैं।

1.3.1 लंगा और मंगणियार समुदाय: *लंगा* और *मंगणियार* दो ऐसे समुदाय हैं, जो पश्चिमी राजस्थान के थार क्षेत्र—विशेषकर जैसलमेर, बाड़मेर, और बीकानेर जिलों—में फैले हुए हैं। ये मुस्लिम समुदाय हैं, जो परंपरागत रूप से हिंदू राजपूत संरक्षकों (जजमानी परंपरा के अंतर्गत) के लिए गीत गाते आए हैं। मंगणियारों के गीतों में देवी-देवताओं की स्तुतियाँ, लोकदेवता पाबूजी और मल्लिनाथ की गाथाएँ, और ऐतिहासिक राजपूत वीरों की वीरता के वर्णन होते हैं। इनके गीतों में *कमायचा, खड़ताल, ढुग्गी* आदि वाद्ययंत्रों का प्रयोग होता है (सिंह, 2017)। लंगा समुदाय के गीत मुख्यतः श्रृंगार रस, प्रेम, और मानवीय संबंधों पर केंद्रित होते हैं। वे *सारंगी* और *मुरली* का अत्यंत भावपूर्ण प्रयोग करते हैं। इनकी गायकी सूफी और लोक भावनाओं का अद्भुत संलयन है। लंगा गायन को 'मरुस्थल का मधुरतम स्वर' कहा जाता है (शर्मा, 2018)।

1.3.2 कालबेलिया समुदाय: *कालबेलिया* समुदाय को "नाचने-गाने वाला" समुदाय माना जाता है, जिसकी परंपरागत आजीविका साँप पकड़ना और उनके विष से औषधि बनाना रही है। आज यह समुदाय अपने विशिष्ट *कालबेलिया नृत्य* और गीतों के कारण अंतरराष्ट्रीय मंचों तक पहुंच चुका है। इनके गीतों में जीवन की गति, स्त्रीत्व की अभिव्यक्ति, और प्रकृति के साथ सामंजस्य की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। *पोंगा, खंजरी* और *बेण* जैसे वाद्ययंत्र इनके संगीत का हिस्सा होते हैं (मेहता, 2016)। 2009 में यूनेस्को द्वारा *कालबेलिया नृत्य* को "Intangible Cultural Heritage" घोषित किया गया, जिससे यह सिद्ध होता है कि यह परंपरा न केवल स्थानीय पहचान का अंग है, बल्कि वैश्विक सांस्कृतिक धरोहर भी है।

1.3.3 गंधर्व और नट समुदाय: *गंधर्व* समुदाय की पहचान उनके वाचिक गायन और कथा-कथन की परंपरा से होती है। यह समुदाय विशेषतः धार्मिक आख्यानों—रामायण, महाभारत, पाबूजी की कथा आदि—को लोकधुनों और नाट्य शैली में प्रस्तुत करता है। *नट* समुदाय भी घूमंतु जीवन जीता है और अपनी जीविका के लिए नृत्य, संगीत, करतब और गायन में संलग्न रहता है। इन समुदायों के गीतों में संघर्ष, श्रम, भटकाव और आत्म-संघर्ष की गूंज होती है (जैन, 2016)।

1.3.4 खानाबदोश और वंचित समुदायों की संगीत परंपराएँ: राजस्थान के अनेक खानाबदोश समुदाय—जैसे *बंजारा, गरासिया, सापेरा,* और *मीरासी*—अपने विशिष्ट गीतों और वाद्ययंत्रों के साथ एक समृद्ध संगीत परंपरा के वाहक हैं। इनका संगीत सामाजिक मुख्यधारा से बाहर रहने के अनुभवों, विस्थापन, वंचना और सांस्कृतिक

पहचान की पुकार से भरा होता है। इनमें सामाजिक आक्रोश, आत्माभिव्यक्ति और समुदाय की एकजुटता के स्वर स्पष्ट रूप से सुनाई देते हैं (सोलंकी, 2019)। इनकी संगीत परंपराएँ बहुधा अनौपचारिक होती हैं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से ही संरक्षित होती रही हैं।

1.3.5 संगीत में सामाजिक पहचान और सामुदायिक आत्मबल: इन जातीय समुदायों की संगीत परंपराएँ उनके सामाजिक अस्तित्व की नींव हैं। यह संगीत उनके आत्मसम्मान, सामूहिक चेतना और सामाजिक संवाद का सशक्त माध्यम है। जब एक मंगणियार कलाकार "केसरिया बालम" गाता है, वह केवल एक गीत प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि अपने इतिहास, जातीय गर्व और सामाजिक संबंधों को भी जीवंत करता है। इसी प्रकार कालबेलिया स्त्रियाँ जब नृत्य-गीत प्रस्तुत करती हैं, तो वे केवल मनोरंजन नहीं करतीं, बल्कि स्त्री अस्मिता, सौंदर्य, और सामुदायिक चेतना का प्रदर्शन करती हैं (वर्मा, 2021)। लोक संगीत इन समुदायों के लिए केवल आजीविका का साधन नहीं है, बल्कि यह उनकी सामाजिक पहचान, संस्कृति के संरक्षण और पीढ़ीगत आत्मबल का प्रतीक है। यह समुदाय-आधारित संगीत परंपराएँ हमें यह सिखाती हैं कि संगीत केवल 'श्रोता' और 'कलाकार' का संबंध नहीं है, बल्कि यह समाज और संस्कृति के बीच जीवंत संवाद का माध्यम भी है (मीणा, 2020)।

1.4 लोक संगीत की सांस्कृतिक परंपरा और सामाजिक चेतना

राजस्थानी लोक संगीत केवल मनोरंजन या धार्मिक भक्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि यह समाज की पीड़ा, संघर्ष, असमानता और जीवन-सत्य की गहन अभिव्यक्ति भी करता है। विभिन्न समयों में यह संगीत परंपरा सामाजिक सवालों को स्वर देती रही है—चाहे वह स्त्री जीवन की विडंबनाएँ हों, किसान की पीड़ा, जल संकट, या जातीय भेदभाव। लोकगीतों में सामाजिक यथार्थ की उपस्थिति इसे जीवंत और संवेदनशील जनभाषा में परिवर्तित कर देती है (मेहता, 2018)।

राजस्थानी लोक संगीत में स्त्री जीवन की विविध अवस्थाएँ—बाल्यकाल, विवाह, विदाई, सास-बहू संबंध, संतान की चाह, और समाज में स्त्री की मर्यादा—की गहन झलक मिलती है। *गोरबंद*, *बणजारा गीत*, *ब्याव के गीत* और *सोहर* जैसे लोकगीतों में स्त्री की अनुभूतियाँ—आशा, पीड़ा, प्रतीक्षा, और सामाजिक बंधनों की विवेचना की जाती है। विशेष रूप से *विदाई गीत* जैसे "पिया मोरी रंग दे चुनरिया" में बेटी के पिता से विछोह की पीड़ा व्यक्त होती है, तो *सजन मिलन गीतों* में स्त्री की दैहिक और भावनात्मक आकांक्षा अभिव्यक्त होती है। इसके अलावा कुछ गीतों में घरेलू हिंसा, पितृसत्ता, और स्त्री को 'पराया धन' मानने की मानसिकता की आलोचना भी अंतर्निहित रूप में मिलती है (चौधरी, 2020)।
स्त्रियाँ स्वयं भी जब लोकगीत गाती हैं—जैसे "मेहंदी रचावे हाथा में, सासू जी बणगी हठीली"—तो वे अपने अनुभवों को कोमल हास्य, व्यंग्य, और करुणा के साथ समाज के सम्मुख प्रस्तुत करती हैं (शेखावत, 2017)।

राजस्थानी भूगोल के अनुसार, यहाँ का कृषक जीवन हमेशा प्रकृति पर आश्रित रहा है—विशेषकर जल की अनुपलब्धता पर। लोकगीतों में मानसून की प्रतीक्षा, सूखा, फसल की बर्बादी, पशुधन की हानि, और कृषक जीवन के दुःखद यथार्थों की बार-बार अभिव्यक्ति होती है। "घड़लो भर भर आयो, नीर भरयो नैणां रो" जैसे गीतों में जल संकट के कारण मानवीय संबंधों में आने वाली कटुता, और जीवन की कठिनाइयों की झलक मिलती है। कुछ लोकगीतों में जल के लिए स्त्रियों की लंबी यात्रा, कुएं से पानी भरने में आने वाली कठिनाइयाँ, और 'पानी री गगरी' का प्रतीकात्मक प्रयोग समाज में जल के महत्व को दर्शाता है (सोलंकी, 2016)।

किसान आंदोलनों के संदर्भ में भी कुछ लोकगीतों में समकालीन संघर्षों की गूँज सुनाई देती है, जैसे कि कृषि सुधारों, ऋणग्रस्तता, और सरकारी नीतियों की आलोचना—यद्यपि यह अपेक्षाकृत आधुनिक अभिव्यक्तियाँ हैं, परंतु अब यह परंपरागत रचनाओं का हिस्सा बनती जा रही हैं (शर्मा, 2019)।

राजस्थान जैसे सामाजिक रूप से विविध राज्य में जातीय असमानताएँ गहरी रही हैं। लोक गीतों में कहीं-कहीं यह असमानता प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होती है, तो कई बार प्रतीकों के माध्यम से। कुछ *भील* या *दलित* समुदायों के गीतों में 'भोगे हुए यथार्थ' की झलक स्पष्ट मिलती है—जैसे "हम जुलहा कासे कहें पीर" या "माटी रो रंग एक ही है, पण जात जात में फर्क क्यूँ" जैसे गीत गहरे सामाजिक विमर्श को जन्म देते हैं (जैन, 2020)। इसके अतिरिक्त, *गाँवड़ी गीत*, *आंदोलन गीत*, और *नारी जागृति गीतों* में हाशिए पर खड़े समुदायों की आत्मसम्मान की चेतना और आवाज़ सुनाई देती है। यह संगीत विरोध, प्रतिरोध और आत्मसाक्षात्कार का सशक्त माध्यम बन जाता है (राजपुरोहित, 2021)।

राजस्थानी लोक गीतों में अनेक सामाजिक आंदोलनों—जैसे *बांध विरोध आंदोलन*, *जल बचाओ आंदोलन*, *जनजातीय अधिकार आंदोलन* आदि की अनौपचारिक गूँज सुनाई देती है। ग्रामीण क्षेत्रों में रचे गए कुछ गीतों में "धरती माँ रो धीरज टूट्यो, छीन्या जाए खनन का बूट्या" जैसी पंक्तियाँ आधुनिक पूंजीवादी विकास मॉडल की आलोचना प्रस्तुत करती हैं। इन गीतों में लोकधर्मी चेतना और पारिस्थितिकीय न्याय की माँग सुनाई देती है (दवे, 2022)। इसी प्रकार, स्त्रियों द्वारा गाए गए *नशाबंदी गीत*, *बाल-विवाह विरोधी गीत* आदि सामाजिक सुधारवादी विचारधाराओं को जन्म देते हैं, और लोक संगीत को जन-जागृति का माध्यम बना देते हैं।

राजस्थानी लोक संगीत में स्त्रियों की भागीदारी न केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम रही है, बल्कि यह स्त्री चेतना, आत्मबल और सामाजिक स्थिति के प्रति उनके दृष्टिकोण का प्रतिबिंब भी है। स्त्री स्वर लोक संस्कृति में एक प्रकार की सामाजिक आत्मकथा प्रस्तुत करता है, जिसमें उनके व्यक्तिगत अनुभव, भावनात्मक तनाव, और सामाजिक सीमाओं के बीच का संघर्ष मुखर होता है (शेखावत, 2019)। यह संगीत स्त्री के लिए न केवल मनोरंजन, बल्कि संवाद, विरोध और आत्मस्वीकृति का मंच भी है।

कई बार लोक गीतों में स्त्रियाँ स्वयं अपने समाज के अंतर्विरोधों और शोषण के विरुद्ध प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से स्वर उठाती हैं। *कठिन गीत*, *गांवड़ी गीत*, और *स्वांग* जैसी परंपराओं में स्त्री अपने अनुभवों को व्यंग्य, करुणा और कभी-कभी तीखे प्रतिरोध के साथ प्रस्तुत करती है। "घूंघट में क्यों राख्यो मुँह, बात करूँ खुलके" जैसे गीतों में स्त्री की आवाज़ पितृसत्ता पर सीधा प्रश्न उठाती है। नारी स्वर को शोषण की चुप्पी नहीं बल्कि सृजनात्मक प्रतिरोध की भाषा में बदलना राजस्थानी लोक संगीत की विशिष्टता है (राव, 2021)। ग्रामीण महिलाएं जब खेतों में काम करते हुए सामूहिक रूप से गीत गाती हैं, तो वह श्रम की थकान को कम करने के साथ-साथ एक सामाजिक संवाद और मनोवैज्ञानिक साझा अनुभव भी बन जाता है। यह गीत एकतरफा नहीं होते, बल्कि समुदायिक चेतना से जुड़कर सशक्त स्त्री भावबोध का निर्माण करते हैं (मेहता, 2018)। समकालीन लोक गायिकाओं जैसे *मुमल*, *राजोबाई*, *मांगी बाई* और *स्वरलता* ने लोक परंपराओं को नए सिरे से व्याख्यायित किया है। इन्होंने स्त्री की भूमिका को केवल गीतों तक सीमित न रखकर उसे लोक मंच पर प्रस्तुत किया, जिससे स्त्रियों की उपस्थिति और आवाज़ समाज में और अधिक दृश्यमान हो सकी (जैन, 2022)। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में *नारी जागृति गीत*, *शिक्षा गीत* और *स्वावलंबन गीत* जैसे लोक रचनाओं के माध्यम से महिलाओं में आत्मविश्वास और अधिकार चेतना को बल मिल रहा है। इस प्रकार राजस्थानी लोक संगीत में स्त्री चेतना एक बहुआयामी स्वरूप में प्रकट होती है—जहाँ वह साधना, संवेदना और संघर्ष—तीनों स्तरों पर सामाजिक विमर्श को गहन बनाती है।

1.5 लोक संगीत और जनचेतना

राजस्थानी लोक संगीत सदियों से न केवल मनोरंजन का साधन रहा है, बल्कि यह जनचेतना को जाग्रत करने का भी एक सशक्त माध्यम रहा है। पारंपरिक गीतों में समाज के नैतिक मूल्य, पर्यावरणीय संतुलन, जल-संरक्षण, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुधार जैसे विषयों को प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किया गया है। यह संगीत लोक भाषा में जन-जन तक पहुंचता है, जिससे यह जनचेतना के निर्माण और प्रसार में विशिष्ट भूमिका निभाता है (कुमार, 2018)। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्र में *जल* की महत्ता को लोकगीतों में बखूबी स्थान मिला है। लोक गायन में ऐसे गीत मिलते हैं जो वर्षा की कामना, जल स्त्रोतों की महत्ता और जल संरक्षण के प्रति जन चेतना को उजागर करते हैं। उदाहरण स्वरूप, “बूंद-बूंद से घड़ो भरै” जैसे गीतों में जल की प्रत्येक बूंद को अमूल्य बताया गया है, जिससे जनता को जल बचाने की प्रेरणा मिलती है (जोशी, 2021)।राजस्थानी समुदायों में *तालाब* और *बावड़ियाँ* केवल जल स्रोत ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक स्थल रहे हैं, और इनसे जुड़े गीतों में जल-संरक्षण के प्रति एक भावनात्मक जुड़ाव भी देखने को मिलता है। ये गीत नई पीढ़ी को संसाधनों के सम्मान और उनके सतत उपयोग के प्रति प्रेरित करते हैं।

अनेक लोकगीतों में शिक्षा की महत्ता को रेखांकित किया गया है। विशेष रूप से स्त्री शिक्षा को लेकर गाए जाने वाले गीतों में यह भावना देखी जाती है कि "पढ़ी-लिखी बेटी घर की शान", या “बेटी पढ़ेगी, समाज बढ़ेगा” जैसे भाव समाज में फैले हैं। ये गीत केवल रुढ़ियों को तोड़ने का प्रयास नहीं करते, बल्कि एक नई सोच को भी जन्म देते हैं (राठौड़, 2020)। वहीं बाल विवाह, दहेज प्रथा, बाल श्रम और नशे की प्रवृत्ति जैसे सामाजिक बुराइयों के विरोध में भी लोक गायकों ने गीतों की रचना की है। इन गीतों को मेलों, जागरणों, पंचायत बैठकों, और स्कूल कार्यक्रमों में गाया जाता है, जिससे समाज के विभिन्न वर्गों में चेतना का संचार होता है (दाधीच, 2019)।

राजस्थानी लोक कलाकार केवल गीतकार या वादक नहीं हैं, वे समाज के भीतर एक सांस्कृतिक नेतृत्वकर्ता की भूमिका निभाते हैं। *कुमार गंधर्व, मांगणियार, लंगा* समुदायों के गायक, तथा आधुनिक लोक बंधु जैसे *मुमल, भूपेंद्र सिंह,* और *स्वरश्री सीमा मिश्रा* ने अपने गायन के माध्यम से पर्यावरण, शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और सामाजिक एकता जैसे विषयों पर जनजागरण किया है (गोदारा, 2022)। इन लोक गायकों की वाणी समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुंचती है, इसलिए ये सामाजिक परिवर्तन के उत्प्रेरक बन जाते हैं। इनका संगीत न केवल परंपरा को सहेजता है बल्कि जन-आंदोलनों का संवाहक भी बन जाता है। राजस्थानी लोक संगीत, इस प्रकार, केवल अतीत की धरोहर नहीं है, बल्कि वर्तमान की सामाजिक चेतना और भविष्य की दिशा तय करने वाला जीवंत माध्यम भी है। इसमें निहित लोक विचारधारा और मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति आज भी समाज को संवाद, चेतना और समरसता का पथ दिखा रही है।

1.6 निष्कर्ष

राजस्थानी लोक संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक परंपरा है जो पीढ़ियों से सामाजिक मूल्यों, ऐतिहासिक चेतना, आध्यात्मिक भावनाओं और समुदाय की स्मृतियों को संजोए हुए है। इस लेख के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि राजस्थान की लोकसंगीत परंपरा विविध स्वरूपों में न केवल भाषायी और सांगीतिक विविधता का परिचायक है, बल्कि यह राज्य की सामाजिक संरचना, सामुदायिक अंतःक्रिया और जनचेतना को भी प्रतिबिंबित करती है।

प्रमुख निष्कर्षों के रूप में यह पाया गया कि लोक संगीत की विधाएँ – माँड, पाबूजी की फड़, गवरी, मीरा भजन, वीर-गाथाएँ – समाज के विभिन्न पहलुओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। लोक वाद्ययंत्र जैसे रावणहत्था, कमायचा और मुरली न केवल ध्वनि उत्पन्न करने वाले उपकरण हैं, बल्कि वे समुदायों की सांस्कृतिक स्मृति और सामूहिक पहचान का वाहक भी हैं। मंगणियार, लंगा, कालबेलिया, गंधर्व जैसे जातीय समुदायों ने अपनी विशिष्ट परंपराओं के माध्यम से संगीत को जीवंत बनाए रखा है। साथ ही, लोकगीतों में स्त्री जीवन, सामाजिक भेदभाव, जल संकट, किसान संघर्ष जैसे मुद्दों की उपस्थिति लोक संगीत को एक सशक्त सामाजिक दस्तावेज़ का दर्जा प्रदान करती है।

सांस्कृतिक और सामाजिक महत्त्व की दृष्टि से देखा जाए तो लोक संगीत राजस्थान की आत्मा है – यह सांस्कृतिक आत्मबल, सामुदायिक सौहार्द, और जनसंवेदना का संवाहक है। लोक संगीत सामाजिक संवाद, परंपराओं के हस्तांतरण, और सामाजिक चेतना के विस्तार का माध्यम रहा है। यह न केवल अतीत को जोड़ता है, बल्कि वर्तमान को जागरूक करने और भविष्य की दिशा तय करने में सहायक होता है।

भविष्य के अध्ययन हेतु संभावित दिशा यह हो सकती है कि विभिन्न लोक विधाओं में पर्यावरण चेतना, स्त्री विमर्श, ग्रामीण जीवन और वैश्विक प्रभावों की तुलना की जाए। आधुनिकता और बाज़ार के बीच लोक संगीत की अस्मिता किस प्रकार सुरक्षित रह सकती है, यह भी शोध का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हो सकता है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म पर लोक संगीत की प्रस्तुति, शहरी युवाओं में इसकी स्वीकार्यता और लोक कलाकारों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति पर केंद्रित अध्ययन भी ज़रूरी हैं।

इस प्रकार, राजस्थानी लोक संगीत परंपरा को केवल संरक्षित नहीं, बल्कि पुनः प्रासंगिक बनाना आज की एक सांस्कृतिक और नैतिक आवश्यकता है।

संदर्भ सूची

1. गोस्वामी, ओ. पी. (2014). *राजस्थान का लोक साहित्य.* जयपुर: राजस्थान ग्रंथ अकादमी।
2. चौधरी, एम. (2020). *लोक कलाकार और राजस्थान का लोक संगीत.* जोधपुर: मरु प्रकाशन।
3. चौधरी, एम. (2020). *राजस्थान के लोक कलाकार और जातीय संगीत परंपराएँ.* जोधपुर: मरु लोक संस्थान।
4. चौधरी, सुभाष. (2018). *राजस्थानी लोक संस्कृति और समाज.* बीकानेर: संस्कार पब्लिशिंग हाउस।
5. चौधरी, एस. (2020). *राजस्थानी लोक गीतों में स्त्री जीवन की अभिव्यक्ति.* बीकानेर: संस्कृति साहित्य संस्थान।
6. दवे, एन. (2022). *सांस्कृतिक प्रतिरोध और लोक संगीत.* नई दिल्ली: पर्यावरण-संवाद संस्था।
7. दाधीच, एम. (2019). *लोक साहित्य और सामाजिक आंदोलन.* अजमेर: संस्कृति संवाद प्रकाशन।
8. जैन, ए. (2020). *लोकगीतों में जातीय चेतना और सामाजिक संघर्ष.* अजमेर: समकालीन समाज अध्ययन संस्था।
9. जैन, पी. (2016). *राजस्थान की लोक परंपराएँ: एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य.* नई दिल्ली: भारतीय लोक कला मंडल।

10. जोशी, पी. (2021). *राजस्थान में जल संस्कृति और लोक गीत.* जयपुर: संस्कृति विमर्श केंद्र।
11. Joshi, A. (2023). *Digital Age and Folk Music Education: A Practical Approach*. Delhi: Centre for Folk Studies.
12. झंवर, दिनेश. (2017). *राजस्थान के लोक वाद्य और उनकी परंपरा.* उदयपुर: संगीत भारती प्रकाशन।
13. कुमार, आर. (2018). *भारतीय लोक परंपरा और सामाजिक परिवर्तन.* नई दिल्ली: जनचेतना प्रकाशन।
14. कंवर, एस. (2017). *ढूंढाड़ी गीतों में स्त्री जीवन की छवियाँ.* अजमेर: मरुप्रज्ञा प्रकाशन।
15. कंवर, ए. (2018). *लोक कलाकार और मीडिया: अवसर एवं संकट.* बीकानेर: जनकल्याण प्रकाशन।
16. गहलोत, पी. (2021). *राजस्थानी लोक संगीत में पारंपरिकता और आधुनिकता का द्वंद्व.* जोधपुर: संगीत शोध केंद्र।
17. गोदारा, ए. (2022). *लोक कलाकारों की सामाजिक भूमिका: एक अध्ययन.* बीकानेर: संगीत लोक संस्थान।
18. टंडन, मोहनलाल. (2012). *भारतीय लोक संगीत का सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य.* दिल्ली: साहित्य भवन।
19. ठाकुर, रेखा. (2020). *नारी स्वर और लोक साहित्य.* जयपुर: विमर्श प्रकाशन।
20. त्रिपाठी, के. पी. (2015). *लोक साहित्य और जनसंस्कृति.* बनारस: भारत लोक विद्यापीठ।
21. Meena, R. (2021). *Tourism and Folk Music: An Interrelation*. Bikaner: Kala Vimarsh.
22. Mehta, B. (2017). *गवरी परंपरा: आदिवासी संगीत और लोक नाट्य का समन्वय.* उदयपुर: आदिवासी संस्कृति केंद्र।
23. Mehta, R. (2018). *लोक संगीत और सामाजिक यथार्थ: राजस्थान का परिप्रेक्ष्य.* जयपुर: स्वर संस्कृति प्रकाशन।
24. मिश्रा, वसुंधरा. (2019). *भारतीय लोक संगीत और वैश्वीकरण.* दिल्ली: संस्कृति विमर्श प्रकाशन।
25. मौर्य, वी. के. (2013). "भारतीय लोक वाद्य और उनका सांस्कृतिक महत्त्व." *भारतीय संगीत शोध जर्नल*, 7(2), 20–29.
26. Meena, D. (2019). *लोक वाद्य और गीतों का पारस्परिक समन्वय.* कोटा: राजस्थानी सांस्कृतिक मंच।
27. Nath, Shailendra. (2016). *भारतीय संगीत और समाज.* दिल्ली: संगीत शोध संस्थान।
28. Patel, Chetna. (2021). "लोक संगीत और समकालीन सामाजिक चुनौतियाँ." *जनवाणी शोध पत्रिका*, 12(3), 45–53.
29. Rathore, D. (2020). *लोकगीतों में शिक्षा और सामाजिक सुधार की चेतना.* जोधपुर: ग्रामीण समाजशास्त्र संस्थान।
30. राजपुरोहित, वी. (2021). *राजस्थान के दलित लोक साहित्य में सामाजिक न्याय की भावना.* बीकानेर: लोक साहित्य समिति।

31. Sharma, D. (2016). *मीरा और नारी आत्मा की मुक्ति.* बीकानेर: भक्तिकाव्य शोध संस्था।

32. Sharma, D. (2019). *किसान आंदोलनों की लोक अभिव्यक्ति.* उदयपुर: नवचेतना शोध प्रकाशन।

33. Sharma, S. (2020). *राजस्थान की सांस्कृतिक संस्थाएँ और लोककलाएँ.* जयपुर: संस्कृति संवाद प्रकाशन।

34. शेखावत, एम. (2017). *राजस्थान की लोक गायन परंपरा और स्त्री स्वर.* जयपुर: महिला अध्ययन शोध केंद्र।

35. शेखावत, एम. (2019). *राजस्थानी लोक साहित्य में स्त्री स्वर.* जयपुर: संस्कृति विमर्श प्रकाशन।

36. Singh, A. (2020). "Folk Instruments and Performers of Rajasthan." *South Asian Folk Studies*, 8(2), 102–114.

37. Singh, R. (2020). *लोक कला का बाज़ारीकरण: एक विश्लेषण.* जयपुर: लोकसंस्कृति संस्थान।

38. Singh, S. (2015). *राजस्थानी वीरगाथा परंपरा का सामाजिक परिप्रेक्ष्य.* अजमेर: वीर तेजा शोध संस्थान।

39. Solanki, K. (2019). *रामदेव भक्ति परंपरा और सामाजिक समरसता.* जोधपुर: शेखावाटी संस्कृति संस्थान।